Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. IV, Issue VII, July-2012, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

वर्तमान में बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. IV, Issue VII, July-2012, ISSN 2230-7540

वर्तमान में बौद्ध दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन

Rimpy[1] Dr. Hema Shiv[2]

Research Scholar, Singhania University, Rajasthan, India

Principal, B. R. College of Education, Kurukshetra

---------------------------♦-----------------------------

भूमिका : गौतम बुद्ध लोक जीवन की पीड़ा को देखकर उद्वेलित हो उठे और उनके मन में भिन्न–भिन्न प्रकार के प्रश्न उपस्थित होने लगे। इन प्रश्नों के उत्तर के अन्वेषण ने उन्हें गृह त्याग हेतु विवश किया। प्रश्नों का उत्तरान्वेषण मात्रा भौतिक संसाधनों का अन्वेषण न था वरन् आत्म–साक्षात्कार का अन्वेषण था। संसार की पीड़ा ने उनके ह्रदय की करूणा सागर को स्पन्दित कर दिया और उनके मुख से प्रस्पफुटित हुआ–सर्वम् दुःखम् और उन्होंने इस दुःख की निवृत्ति हेतु चार आर्य सत्यों की विवेचना की।

– दुःख

– दुःख समुदाय

– दुःख निरोध

– दुःख निरोधगामी प्रतिपद्

आर्य अष्टांगिक मार्ग बुद्ध ने दुःख निवृत्ति को ही महत्वपूर्ण माना था, जिसके लिए उन्होंने अष्टांगिक मार्ग की कल्पना की थी, निर्वाण प्राप्त हेतु इनका पालन आवश्यक था। ये मार्ग निम्नवत् हैं–

सम्यक् दृष्टि–चारों आर्य सत्यों का सतत् ध्यान, जो निर्वाण की ओर ले जाता है।

सम्यक् संकल्प– दूसरों के लिए प्रतिकूल भावना हानि पहुंचाने के विचार का समूल उच्छेद् अर्थात् त्याग, परोपकार, करूणा की भावना का आविर्भाव।

सम्यक्र्मान्त–जीवनाश, चोरी, कामुकता, झूठ, अति भोजन, सामाजिक मनोरंजन में जाना, आभूषण, आरामदेह बिस्तर का उपयोग, स्वर्ण–रजतादि के प्रयोग से बचना आदि।

सम्यक् वाचा– मिथ्यावचन, निन्दा, अप्रिय एवं अनत्य वचन से दूर रहना, वाणी नियंत्राण।

सम्यक् समाधि–अच्छे जीवनयापन के अनन्तर मोक्ष प्राप्त करना।

ये पांच नियम मात्रा भिक्षु वर्ण के लिए निर्मित थे। वर्तमान सन्दर्भों में भी इनकी कोई उपयोगिता नहीं है, क्योंकि यदि इन्हें ग्रहण किया गया तो संपूर्ण मानव समाज भिक्षु समान बन जाएगा एवं संपूर्ण सृष्टि का संतुलन बिगड़ जायेगा। क्योंकि यहां बुद्ध का दृष्टिकोण निराशावादी एवं पलायनवादी था। बुद्ध ने जीवन के एक मात्रा एक ही पक्ष को देखा था। वह था दुःख का अस्तित्व। यद्यपि कि दुःख के साथ सुख भी होता है यदि सुख क्षणिक है तो दुःख भी अस्थिर ही होता है। हां बुद्ध ने गृहस्थों के लिए भी नियम बताये थे, जो उन्हें निराशावादी या पलायनवादी दृष्टिकोण से मुक्त करते हैं। अष्टांग मार्ग के तीन अंशों की प्रासंगिकता आज भी है।

सम्यक् आजीव–शुद्ध उपायों से जीविकोपार्जन। यह साम्यवाद एवं समाजवाद का मूलाधार है। यथा–अस्त्रा शस्त्राादि, पशु–गोश्त, शराब, जहर आदि का व्यापार वर्जित माना गया था। यदि वर्तमान संदर्भों में देखते तो यह सर्वाधिक अनुकरणीय प्रसंग है। व्यक्ति का संपूर्ण जीवन स्तर एवं सोच प्रक्रिया ही अत्यधिक निम्न हो गयी है, कारण मात्रा जीविकोपार्जन के अनुचित साधन है। आज ड्रग्स, नशीले पदार्थों एवं अवैध शस्त्रों के निर्माण के व्यापार ने संपूर्ण युवा पीढ़ी को खोखला बना दिया है। अवैध शस्त्रों के माध्यम से उन्हें राष्ट्रद्रोही एवं आतंकवादी बनाया जा रहा है। समाज के हर क्षेत्रा में दबाव, धोखा, रिश्वत, व्यभिचार, अत्याचार, जालसाजी, तस्करी, डकैती, लूट, कृतझनता के दिन प्रतिदिन पफैलते जहर से बचने का एक मात्रा साधन है, आजीविका के उचित साधन का चुनाव।

सम्यक्–व्यायाम–भविष्य में पतन के खतरों से बचाव हेतु स्वयं में आविर्भूत कुसंस्कारों से बचना होगा, बुरे संस्कारों को रोकना होगा। इसके लिए आत्मसंयम, इन्द्रिय निग्रह, विचारों को रोकना, शुभ विचारों को जाग्रत करना होगा। सम्यक् स्मृति– इसके अंतर्गत शरीर की अशुद्धियों, सुख–दुख तटस्थ वृत्ति का स्वभाव, लोभ, घृणा, भ्रमयुक्त मनः स्थिति, धर्मों, पन्चस्कन्धों, इंद्रियों, इंद्रिय विषयों, बोधि के साधनों तथा चार आर्य सत्वों का निरंतर स्मरण। इससे दुःखों का नाश एवं आसक्ति से मुक्ति प्राप्त होती है। बु(का उपदेश था कि यदि हम यह समझ लें कि शरीर नाशवान है, एवं अन्ततः सड़ना, गलना, दबना, जलना ही इसकी नियति है, तो एक–दूसरे के प्रति अनुराग भाव नष्ट हो जाएगा, ज्ञान ही वेदना, चित्त एवं अशुभ वृत्तियों के प्रति अनुराग नष्ट हो जाएगा। सशरीर के प्रति आसक्ति नष्ट हो जाने पर इसके सुख हेतु किये गये कुकर्म नष्ट हो सकते हैं।

गृहस्थों के लिए नियम :

सामान्य जन के लिए विशेष नियम बनाये गये थे। यथा माता–पिता बच्चों को योग्य सद्गुणों से शिक्षित कर धनादि देकर विवाह कर दें। सन्तान, माता–पिता की सेवा करते हुए पारिवारिक कर्त्तव्यों का निर्वाह कर योग्य संतान बनें। विद्यार्थी,

www.ignited.in

विद्याध्ययन करें, गुरुजनों का आदर, आज्ञापालन तथा उनकी आवश्यकता की पूर्ति करें। गुरुजनों को शिष्यों में सद्गुणों का विकास कर समस्त विद्याओं में पारंगत कर देना चाहिए। पति–पत्नी दोनों को ही एक–दूसरे का सम्मान, प्रेमसहित रहते हुए कुशल गृहस्थी का संचालन कर अतिथि सत्कार करना चाहिए। इसी प्रकार स्वामी, सेवक, मित्राजन, गृहस्थ आदि के परस्पर व्यवहारों के नियमों का बुद्ध ने विशद वर्णन किया है। सबको निःस्वार्थवृत्ति, उदारता एवं करूणा का उपदेश दिया है। इन नियमों की उपादेयता आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी कि तब थी। बुद्ध द्वारा बताये गये नैतिक कर्त्तव्य ही समाज को कल्याणोन्मुख कर सकते हैं। क्योंकि आज के वातावरण में व्यक्ति दैवी आपदाओं से तो कुछ सीमा तक सुरक्षित है परन्तु यदि उसे खतरा है तो एकमात्रा पथभ्रष्ट मनुष्य से मनुष्य का। जो नैतिक चारित्रिाक गुणों के विकसित होने पर ही संभव है। बु(के यह उपदेश सरल, व्यवहार्य, सुखदायक एवं भूतल को स्वर्ग बना देने वाले हैं। इसके अतिरिक्त प्रतीत्यसमुत्पाद, दुःखवाद आदि सि(ांतों की भी समीचीनता है। प्रतीत्यसमुत्पाद तो सांख्य का कार्यकरण सिद्धांत ही है। वर्तमान में प्रत्येक स्थिति जो व्यक्ति को संत्रास्त किए है, उसके पीछे कोई न कोई कारण अवश्य ही विद्यमान होगा, जिसे जान लेने पर उसे दूर करने का प्रयास हमें समस्त पीड़ा, कष्ट, दुःखों से मुक्त कर सकती है। कार्यकरण का यह सिद्धांत तो शाश्वत् सत्य है। जो पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार ही शेष कर्मपफल को भोगने हेतु दूसरा जन्म धारण करना पड़ता है। यही कारण है कि कोई व्यक्ति सर्वसाधन संपन्न होकर भी दुःखी है, तो कोई विपन्न होते हुए भी सुखी है। कोई अति सम्पन्न है तो कोई अति निर्धन। दुःख के कारणों, तृष्णाओं का नाश करने पर ही सुख की प्राप्ति संभव है।

बुद्ध का व्यक्तित्व :

बौद्ध दर्शन की शिक्षाओं की सपफलता के लिए सर्वाधिक उपादेय इस धर्म का त्रिारत्न है –बुद्ध संघ और धर्म। इस धर्म में बुद्ध का व्यक्तित्व एक ऐसी धातु था जो संसार के लोगों को अनायास आकृष्ट करता था। बुद्ध का व्यक्तित्व सचमुच महान् अलौकिक और दिव्य था। उनके व्यक्तित्व की प्रतिभा के प्रकाश से पुराने पापियों का भी मनोमालिन्य दूर हो जाता था। अपूर्व त्याग बु(के जीवन का महान् गुण था। राजघराने में पैदा होने पर भी इन्होंने अपने विशाल साम्राज्य को ठुकरा दिया। राज–प्रसादों के मखमली गद्दों को छोड़कर इन्होंने जंगल का कण्टकाकीर्ण जीवन स्वीकार किया। इन्होंने अपने शरीर को सुखाकर कांटा कर दिया परन्तु धन तथा सुख की कामना नहीं की। सचमुच, जब कपिलवस्तु का यह राजकुमार अपनी युवावस्था में ही राज्य, गृह और गृहिणी से नाता तोड़ और विरक्ति तथा तपस्या से संबंध जोड़कर अपना भिक्षापात्रा लिए, संसार को विश्व शांति का उपदेश देता हुआ घूमता होगा, उस समय का वह दृश्य देवताओं के लिए भी दर्शनीय होता होगा। त्याग और तपस्या, दमन और शमन, शांति और अहिंसा का एकत्रा संयोग वास्तव में बुद्ध के व्यक्तित्व को

छोड़कर अन्यत्रा मिलना कठिन है। बुद्ध के चरित्रा का दूसरा गुण उनका आत्म–संयम था। इन्होंने गृह त्याग दिया था, पत्नी का त्याग किया था और शेष जीवन को आत्मदमन और संयम में बिताया। जब वे तपस्या कर रहे थे, उस समय मार ने अनेक अप्सराओं और परम सुंदर युवतियों को लेकर उन पर आक्रमण किया परंतु उनके विगतराग हृदय में, कामवासना से रहित मानस में तनिक भी विकार नहीं पैदा हुआ और दृढ़ प्रतिज्ञ होकर अपने आसन से वे तनिक भी नहीं डिगे। यह भी उनकी इंद्रिय निग्रह या आत्म संयम की परीक्षा थी और बुद्ध इसमें पूर्णतया सपफल हुए। इस प्रकार उनका चरित्रा अत्यन्त उज्जवल, पवित्रा तथा अनुकरणीय था। तथागत के चरित्रा की तीसरी विशेषता परोपकार वृत्ति थी। बुद्ध का हृदय मानव प्रेम से पूर्णतः भरा हुआ था। मनुष्यों के नाना प्रकार के दुःखों को देखकर उनका हृदय टूक–टूक हो जाता था। वे दूसरों के दुःखों से स्वयं दुःखी रहते थे। यही कारण है कि उन्होंने मानव दुःखों का नाश करना अपने जीवन का परम लक्ष्य बनाया। मनुष्यों के दुःखों को दूर करने की औषधि पाने के लिए ही वे अनेक वर्षों तक जंगल में भटकते रहे और अंत में उसे प्राप्त कर ही विश्राम लिया। उन्होंने चार आर्य सत्यों तथा अष्टांगिक मार्गों का अनुसंधान कर मनुष्यों के क्लेश निवारण का उपाय बताया। उन्होंने घर छोड़ा, घरिनि छोड़ी, राज्य छोड़ा और सुख छोड़ा परंतु क्या प्राप्त किया?–मानव दुखों को दूर करने का परमौषध। बुद्ध का सारा जीवन परोपकार का प्रतीक है, पर सेवा का उदाहरण है तथा

लोक मंगल का ज्वलंत प्रमाण इनके धर्म को स्वीकार कर लेती थी क्योंकि वह समझती थी इसमें उनका कुछ भी स्वार्थ नहीं है। बुद्ध का हृदय अत्यन्त उदार था। वे अजातशत्राु थे। उनके लोकोत्तर व्यक्तित्व के सामने शत्राु भी मित्रा बन जाते थे। देवदत्त उनसे बुरा व्यवहार करता था, परंतु वह भी उनका मित्रा बन गया। बुद्ध सब मनुष्यों को समान दृष्टि से देखते थे। यही कारण था कि इनके यहां गिरिव्रज का राजा अजातशत्राु भी आता था और साधारण पतित भी। बुद्ध पाप से घृणा करते थे, परंतु पापी को अत्यन्त प्यार की दृष्टि से देखते थे। इसलिए उन्होंने एक बार एक वेश्या का भी आतिथ्य स्वीकार किया था। सचमुच बुद्ध का व्यक्तित्व लोकोत्तर था, महान एवं दिव्य था, जिसके घर स्वयं गिरिव्रज के महान् सम्राट दर्शन के लिए आते, वह कितनी बड़ी विभूति होगा जिसके पास झगड़ा निपटाने के लिए लिच्छवि तथा कोलिंग जैसे प्रसिद्ध राजवंश आते तथा जो इनकी मध्यस्था को स्वीकार करे वह सचमुच ही लोकोत्तर व्यक्ति होगा। अपने सुख एवं शांति की तनिक भी चिंता न कर मानव गण को विश्व शांति तथा अहिंसा का पाठ पढ़ाने वाले इस शाक्यकुमार का व्यक्तित्व कितना विशाल होगा, इसका अनुमान लगाना भी कठिन है। काषाय वस्त्रा को धारण किए, हाथ में भिक्षापात्रा लिए तथा मुख पर प्रभा–मण्डल को धारण किए भगवान् बुद्ध के व्यक्तित्व की कल्पना मन को मोहित कर लेती है। उनका साक्षात् दर्शन तो किसे आनंद सागर में निमग्न न कर देता होगा? बुद्ध के व्यक्तित्व की विशालता को भारतीय लोगों ने ही नहीं, विदेशों ने भी स्वीकार किया है। मध्यकालीन युग में बुद्ध का व्यक्तित्व लोगों को आकर्षित करता था। मार्कोपोलो ने लिखा है–फ्यदि वे ; बु(द्ध ईसाई होते तो वे क्राइस्ट धर्म के बहुत बड़े संतों में से एक होते। उनके तथा क्राइस्ट के चरित्रा तथा शिक्षा में बहुत कुछ समानता है। सुप्रसिद्ध विद्वान बार्थ ने लिखा है– फ्बुद्ध का व्यक्तित्व शांति और माधुर्य कासंपूर्ण आदर्श है। वह अत्यन्त कोमलता, नैतिक स्वतंत्राता और पाप–रहित मूर्ति है।

संघ की विशेषता :

बौद्ध धर्म की दूसरी विशेषता संघ है जो उसका दूसरा रत्न है। बुद्ध ने यह समझकर कि अपने जीवन में मैंने जिस धर्म का प्रचार किया है वह सदा पफूला–पफलता रहे तथा वृद्धि को प्राप्त हो एक संघ की स्थापना की तथा इसमें रहने के लिए कठिन नियम बनाया। उन्होंने संघ में रहने वाले भिक्षुओं के लिए कठिन नियम बनाये और उन्हें आदेश किया कि वे ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करें, पवित्राता से रहें तथा धर्म के प्रचार का उद्योग करें। बौद्ध संघ का अनुशासन बहुत ही कठिन था। अतएव अविच्छत भिक्षुओं का प्रवेश उसमें नहीं हो सकता था।

बुद्ध ने भिक्षुओं के लिए संघ में प्रवेश करना प्रथमतः निषिद्ध बतलाया था जिससे संघ की पवित्राता सदा अक्षुण्ण बनी रहे।

यही कारण था कि बौद्ध संघ में बहुत दिनों से कोई बुराई नहीं घुसने पाई परंतु जब इनके चेलों ने इस नियम में शिथिलता दिखलाई तथा भिक्षुणियों का संघ प्रवेश का अधिकार व्यापक हो गया, तभी से इसमें बुराइयां आने लगी और अन्त में इसका नाश हो गया। अतः बुद्ध की दूरदर्शिता इसी से समझी जा सकती है। इस सुसंगठित संघ के द्वारा बौद्ध धर्म के प्रचार में बहुत सहायता मिली। इस संघ ने बौद्ध धर्म में एकता का भाव उत्पन्न किया और जाति को शक्ति प्रदान की। सबसे बड़ी बात जो इस संघ के द्वारा हुई वह बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए पमिशिनरी स्पिरिट की जागृति थी। इस संघ के अनेक भिक्षुओं ने विदेशों में जाकर इस धर्म का प्रचार करना अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया और उन्होंने सुदूर पश्चिम और पूर्व में इस धर्म का प्रचार बहुत जोरों से किया। सम्राट अशोक ने अपने पुत्रा महेन्द्र और लड़की संघमित्राा को सिंघल द्वीप में इस धर्म के प्रचार के लिए भेजा। यह उन्हीं के उद्योग का पफल है कि आज श्रीलंका में बौद्ध धर्म का प्रधान पीठ बना हुआ है।

सुप्रसिद्ध विद्वान भिक्षु कुमारजीव और परमार्थ ने चीन जैसे सुदूर देश में इस धर्म की विजय वैजयन्ती पफहरायी और इसकी भाषा में अनेक संस्कृत बौद्ध ग्रंथों का अनुवाद कर उसके साहित्य को भर दिया। बौद्ध धर्म के प्रचार की दृढ़ भावना से प्रेरित होकर अपनी वृद्धावस्था में भी आचार्य शांतिरक्षित ने तिब्बत जैसे दुर्गम देश की

यात्राा की और वहां धर्म का प्रचार किया। अधिक अवस्था होने के कारण वे निर्वाण को वहीं प्राप्त हो गये। कुछ दिनों के पश्चात् उनके शिष्य कमलशील भी वहां गये और उन्होंने तिब्बतीय भाषा में अनेक संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद किया। इसी प्रकार दूसरे भिक्षुओं ने नेपाल, बर्मा, जावा, सुमात्राा और बोर्नियो में जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार किया और इसे विश्व धर्म बनाया। इस प्रकार हम देखते हैं कि संघ की स्थापना के द्वारा बौद्ध धर्म के प्रचार में बड़ी सहायता मिली। सच पूछा जाए तो यही कहना पड़ेगा कि इसी संघ के द्वारा बौद्ध धर्म विश्व–धर्म के रूप में परिणत हो सका। भारत में धर्म के प्रचार में 'मिशनरी–भावना' की शिक्षा हमें बौद्ध धर्म से ही मिली है और इसका सारा श्रेय बौद्ध संघ को प्राप्त है।

बुद्धिवाद :

यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से विचार करते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि बौद्ध धर्म की सबसे बड़ी विशेषता उसका बुद्धिवाद है। यद्यपि यह कहना अनुचित होगा कि बुद्ध के पहले धर्म में बुद्धिवाद को स्थान नहीं था, पिफर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि गौतम बुद्ध ने बुद्धिवाद को जितना महत्व प्रदान किया उतना किसी ने नहीं किया था। गौतम बुद्ध के पहले वैदिक धर्म का बोलबाला था। वेद का प्रमाण अखण्डनीय समझा जाता था। वेद की प्रमाणिकता में संदेह करना अधर्म गिना जाता था। पधर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिःय यह महामंत्रा उद्घोषित किया जाता था। धर्म के संबंध में श्रुति ही परम प्रमाण मानी जाती थी और श्रुति से इतर वस्तु प्रमाण कोटि में नही जाती थी। यद्यपि भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में बुद्धौ शरणमन्विच्छय कहकर बुद्धिवाद की महत्ता को स्वीकार किया है, पिफर भी अंत में उन्होंने धार्मिक मामलों में शास्त्रा को ही प्रमाण माना है। धर्म, अधर्म की उलझन में पड़े हुए मनुष्यों को उन्होंने पतस्मात् शास्त्रां प्रमाणं ते कार्या कार्यव्ययस्थितोय का उपदेश दिया है।

इस प्रकार से आर्य धर्म में सर्वत्रा शास्त्रा को ठीक प्रतिष्ठा दी जाती थी और वही परम् माना जाता था। परन्तु शाक्यमुनि का कार्य था कि उन्होंने युक्तिवाद या बुद्धिवाद को शास्त्रावाद के स्थान पर प्रतिष्ठित किया। भगवान् बुद्ध की यह शिक्षा थी कि बुद्धिवाद का आश्रय लो तथा शास्त्रा पर विश्वास मत करो। अमुक वस्तु ऐसी है, क्योंकि शास्त्रा में ऐसा लिखा है–इस मनोवृति का उन्होंने घोर विरोध किया और अपने शिष्यों को यह उपदेश दिया कि किसी वस्तु को तब तक ठीक मत समझो जब तक कि तुम उसकी परीक्षा स्वयं न कर लो। उन्होंने अपने परम् शिष्य आनंद से यहां तक कहा कि धर्म के किसी सिद्धांत को इसलिए सत्य मत मानो क्योंकि मैं ;स्वयं बु(द्ध ऐसा कहता हूं, बल्कि उसे तभी स्वीकार करो जब वह तुम्हारी बुद्धि में ठीक जंचे। सारांश यह है कि बुद्ध का यह मत था कि धर्म के संबंध में किसी अन्य वस्तु या व्यक्ति को प्रमाण मत मानो। यदि कोई धार्मिक सिद्धांत तुम्हारी बुद्धि को उचित मालूम होता है तो उसे स्वीकार करो अन्यथा उसे दूर रखो। इसलिए भगवान् तथागत ने प्रत्येक मनुष्य को अपना पथ–प्रदर्शक स्वयं बनने का उपदेश दिया है। उन्होंने अपने उपदेश में स्पष्ट कहा है कि पअन्तदीपाः भवथ अन्तशरणाःय अर्थात् तुम लोग स्वयं ही दीपक बनो तथा दूसरों की शरण में न जाकर अपनी ही शरण में जाओ। इसका भाव यह है कि अपनी आत्मा से जो प्रकाश मिलता है उसी के द्वारा धर्म के रहस्यों को समझो तथा गुरु अथवा धर्मोपदेशक की शरण में न आकर स्वयं ही अपना पथ–प्रदर्शन करो। जहां अन्य धर्म वालों ने गुरु को ईश्वर से भी बड़ा बतलाकर उसकी शरण में आना शिष्य का परम् कर्त्तव्य निश्चित किया है, वहां बु(ने गुरु की सत्ता को सीमित कर शिष्य की महत्ता का प्रतिपादन किया है।

संभवतः संसार के इतिहास में इस प्रकार का धार्मिक उपदेश शायद ही कहीं सुनने को मिले, परन्तु तथागत के रूप में हम एक ऐसे विलक्षण धर्मोपदेशक को पाते हैं जिसने न केवल शास्त्राों की सत्ता को अस्वीकृत किया, बल्कि अपना ;गुरुद्ध प्रमाण्य भी न मानने के लिए शिष्यों को पूरी स्वतंत्राता दे दी। इस प्रकार गौतम बुद्ध ने मनुष्य की महत्ता तथा उसकी पवित्राता को स्वीकार किया। उस प्राचीन काल में जब व्यक्तिगत विचार का विशेष मूल्य नहीं था तथा शास्त्राों की प्रमाणिकता के आगे तर्क को स्थान नहीं दिया जाता था, बुद्ध ने बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा कर सचमुच ही बहुत बड़ा काम किया। लोग यह समझने लगे कि इस धर्म को मानना चाहिए इसलिए आवश्यक नहीं है कि यह किसी राजकुमार या तपस्वी के द्वारा चलाया गया है, बल्कि इसलिए कि अपनी बुद्धि को यह उचित प्रतीत होता है इस प्रकार अनेक लोगों ने–जिन्हें यह पसंद आया, इस धर्म को स्वीकार कर लिया। यही कारण है कि आजकल भी यह धर्म अपने बु(िवाद के कारण लोगों को अधिक 'अपील' करता है।

मानवमात्रा की समानता का विचार :

बौद्ध धर्म की एक प्रमुख विशेषता सब मनुष्यों का समान अधिकार स्वीकार करना है। वैदिक धर्म यद्यपि बड़ा ही उदार व्यापक तथा स्पृहणीय है, परन्तु उसमें एक बड़ी कमी है कि वह सब मनुष्यों का समान अधिकार नहीं मानता। यद्यपि भगवान ने

www.ignited.in

गीता में ब्राह्मण तथा चाण्डाल के बीच में भेद–दर्शन को मिटाते हुए स्पष्ट ही कहा है–

फविद्याविनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता समदर्शिनः।।य

परन्तु यह समदर्शिता व्यवहारक के क्षेत्रा में विशेष नहीं लायी गयी। यह केवल पुस्तक के पृष्ठों में ही पड़ी रही। जिस समय बौद्ध धर्म का प्रादुर्भाव हुआ उस समय वैदिक धर्म की प्रधानता थी। यज्ञ, यज्ञादि बड़े उत्साह तथा विधि–विधान के साथ किये जाते थे। वेद का पढ़ना द्विज–जातियों के लिए अत्यावश्यक समझा जाता था। सन्धयोपासना तथा सावित्री मंत्रा का जप धर्म के प्रधान अंग समझे जाते थे। परन्तु ये सब अधिकार केवल ब्राह्मण, क्षत्रिाय एवं वैश्यों के लिए ही थे। शूद्र न तो वेद ही पढ़ सकता था और न ही यज्ञादि ही कर सकता था। शूद्र तथा स्त्रियों को वेद न पढ़ने की स्पष्ट आज्ञा का उल्लेख मिलता है–

फस्त्री शूद्रौ नाधीयेताम्य।

भगवान् व्यास ने महाभारत की रचना का कारण बतलाते हुए लिखा है कि शूद्र तथा स्त्रियों को वेदत्रायी नहीं, सुननी चाहिए अर्थात् वे इसके पठन से वंचित हैं, अतः कृपा करके मुनि ;व्यासद्ध ने महाभारत की रचना की–

फस्त्रीशूद्रद्विजवन्धूनां त्रायी न श्रुतिगोचरा।

इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम।।य

इस प्रकार शूद्र उच्च अधिकारों से वंचित थे और उनके लिए अपनी उन्नति, सामाजिक तथा आध्यात्मिक का द्वार बन्द था। बुद्ध ने मनुष्य के बीच वर्तमान इस असमानता के दोष को देखा और उन्होंने यह स्पष्ट घोषणा कर दी कि सब मनुष्य

समान हैं। न कोई श्रेष्ठ है और न कोई नीच। अपने कर्मों के अनुसार ही मनुष्य को लघुता या गुरुता प्राप्त होती है। उन्होंने यह भी शिक्षा दी कि धर्म में सबका समान अधिकार है। जो चाहे अपनी इच्छानुसार इसे ग्रहण कर सकता है। इस प्रकार आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व बुद्ध ने प्रजातंत्रावाद के इसी मूल सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। सचमुच ही उस प्राचीन युग में इस प्रकार की विद्रोहात्मक घोषणा करना बड़े ही साहस का काम था, परन्तु इसका प्रभाव बड़ा ही संतोषजनक हुआ। वे नीची जातियां–जो वैदिक धर्म में तिरस्कृत समझी जाती थीं–अपनी उन्नति करने लगीं और सामूहिक रूप से इन्होंने इस धर्म को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार से यह धर्म निम्न कोटि के लोगों में धीरे–धीरे पफैलने लगा तथा इसकी वृद्धि होने लगी।

आजकल अनेक फवादय निकल पड़े हैं जिसके अनुसार कोई राष्ट्र को महत्ता देता है, तो कोई व्यक्ति को। आजकल के धर्मों में मानव के समान अधिकार की चर्चा प्रायः सर्वत्रा सुनाई देती है, परन्तु यदि किसी को सर्वप्रथम मनुष्य तथा मनुष्य के बीच में समान अधिकार स्थापित करने का श्रेय प्राप्त है तो वह केवल बुद्ध को ही है। उन्होंने अपने इस उपदेश को न केवल सिद्धांत रूप में ही रखा, बल्कि इसे व्यवहार के रूप में भी परिणत किया। उन्होंने अपना पट्टशिष्य एक नाई को बनाया, जिसका नाम उपालि था। नीच जाति में उत्पन्न होने के कारण इन्होंने इसका बहिष्कार नहीं किया, बल्कि उसे अपनाकर अपना मुख्य शिष्य बना लिया। इस प्रकार उनके सिद्धांत और व्यवहार में एकता होने से उनके उपदेशों का लोगों के हृदय पर अत्याधिक प्रभाव पड़ता था।

सदाचार पर बल :

बौद्ध धर्म की एक अन्य महत्ता सदाचार के ऊपर अत्याधिक जोर देना है। भगवान तथागत ने अपने उपदेश में सदाचार पर ही विशेष जोर दिया है। यदि कोई ब्रह्म के विषय में चर्चा करता था तो या तो वे मौन रहकर उत्तर ही नहीं दे थे और यदि उत्तर भी देत थे तो यही कहते थे कि तुम सदाचार का पालन करो, व्यर्थ के दार्शनिक झगड़ों में क्यों पड़ते हो? उन्होंने मनुष्य के आचरण सुधारने के लिए फअष्टांगिकय मार्ग का उपदेश दिया है जिसके आचरण करने से मनुष्य पवित्रा बन जाता है और उसका चरित्रा अत्यन्त उज्जवल और निष्कलंक होता है। जिस प्रकार ईसाई धर्म में दस आज्ञाओं का पालन अत्यावश्क है, उसी प्रकार से बौद्ध धर्म में इन अष्टांगों का पालन अत्यन्त आवश्यक माना गया है। गौतम बुद्ध अच्छी तरह से जानते थे कि दार्शनिक सिद्धांतों में मतभेद हो सकता है, परन्तु सदाचार के पालन में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती। इसीलिए उन्होंने एक ऐसे सर्वजनीय सदाचार का उपदेश दिया जो सबको बिना किसी संकोच के मान्य था। यदि इस धर्म के मूल सि(ांतों की खोज की जाए तो इसमें सदाचार के अतिरिक्त ओर कुछ नहीं मिल सकता। इसीलिए विद्वान बौद्ध धर्म को नैतिक कहते हैं–अर्थात् वह धर्म जो केवल सदाचार को सर्वाधिक महत्व प्रदान करता है। इसलिए साधारण जनता के लिए इस धर्म का पालन सुलभतया सुगम था। गौतम बुद्ध ने अहिंसा का उपदेश देकर संसार पर बड़ा ही उपकार किया।

वैदिक धर्म में यज्ञ–यज्ञादि का बड़ा महत्व था। यज्ञों में पशुओं का बलिदान किया जाता था। परन्तु कालान्तर में यह हिंसा अपनी सीमा का उल्लंघन कर गयी थी और धर्म के नाम पर अनेक जीवों की हत्या प्रतिदिन की जाती थी। बुद्ध ने देखा कि यह काम बड़ा ही घृणास्पद और नीच है। निरपराध सहस्त्रों पशुओं की हिंसा निरर्थक की जा रही है और वह भी धर्म के नाम पर। दीन पशुओं की वाणी ने इनके हृदय को द्रवित कर दिया। फसदयहृदय दशितपशुघातंय वाले इस महात्मा तथा महापुरूष ने इस पशु हिंसा के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा उठाया और तार स्वरों में इस बात की घोषणा की कि यज्ञ–यज्ञादि का करना व्यर्थ है। मनुष्यों को चाहिए कि पशुओं पर हिंसा न करें, क्योंकि संसार में यदि कोई धर्म है तो केवल अहिंसा ही है।

बुद्ध ने अहिंसा को बड़ा ही महत्व प्रदान किया है और इसे परम् धर्म माना है–फअहिंसा परमो धर्मःय जहां आजकल का रणमत्त संसार हिंसा को ही अपना परम् धर्म मानता है, वहां आज से 2500 वर्ष पहले बुद्ध ने मानव को अहिंसा का पाठ पढ़ाया था। बुद्ध संसार के दुःख को कम करना चाहते थे। उनकी यही आकांक्षा थी कि संसार के सभी जीव सुख से तथा शांतिपूर्वक निवास करें। उनका हृदय करूणा तथा दया का अगाध महोदधि था। क्षुद्र जीवों के प्रति भी उनके हृदय में अन्नत प्रेम था। अहिंसा के उपदेश का उन्होंने केवल प्रचार ही नहीं किया, बल्कि उसे व्यवहार में लाने पर भी जोर दिया। उन्होंने स्वयं अपने जीवन को खतरे में डालकर किस प्रकार काशिराज के हाथों से एक मृग शिशु की जीवन रक्षा की थी, यह ऐतिहासिकों से अविदित नहीं है। उनकी इस शिक्षा तथा व्यवहार का जनता में अत्यधिक प्रभाव पड़ा। सम्राट अशोक तो उनके अहिंसा सिद्धांत का इतना पक्षपाती था कि उसने राजकीय महानस में भोजन के लिए मयूर तथा मृगों को मारने

www.ignited.in

की निषेध आज्ञा निकलवा दी थी। इस प्रकार से अन्नत जीवों की रक्षा कर गौतम बुद्ध ने प्राणी मात्रा पर बड़ा उपकार किया। राजा शिवि के शब्दों में उनके जीवन का एक ही उद्देश्य था और वह था–प्राणियों के कष्टों को दूर करना। न तो इन्हें राज्य की कामना थी और न धन की। न तो स्वर्ग की स्पृहा उनके हृदय में थी और न अपवर्ग की लालसा। कपिलवस्तु का यह राजकुमार केवल अन्य प्राणियों के दुःखों को दूर करने के लिए ही स्वयं अनेक कष्टों को झेलता रहा। सचमुच ही उनका सि(ांत था–

फन त्वहं कामये राज्यं, न स्वर्ग नापुनर्भर्वम्।

कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्ति नाशनम्।।य

दूसरी बात जो बौद्ध धर्म में विशेष महत्व रखती है वह आत्मदमन की शिक्षा। गौतम बुद्ध ने आत्मदमन–अपने आत्मा को वश में करने का उपदेश दिया है। उनका सिद्धांत था कि आत्मा को अपने वश में किए बिना कोई कार्य सम्पादित नहीं हो सकता। इसीलिए उन्होंने मनुष्य के अंदर रहने वाले काम, क्रोध, मद, लोभ, अहंकार आदि के दमन के ऊपर विशेष जोर दिया है। मनुष्य विकारों का समुदाय है। अतः जब तक वह अपने आंतरिक विकारों को दूर कर इंद्रियों को वश में नहीं करता, तब तक वह विजेता नहीं कहला सकता। इसीलिए बुद्ध ने दूसरों पर विजय प्राप्त करने की अपेक्षा आत्म–विजय पर इतना जोर दिया है। वे स्वयं दान्त और शांत थे। जब वे अपनी तपस्या में लगे हुए थे तब एक बार मारने उनको समाधिच्युत करने के लिए अनेक सुंदरी अप्सराएं भेजीं, परन्तु वे अपनी प्रतिज्ञा से टस से मस नहीं हुए।

फइहासने शुख्यत में शरीर त्वगस्थिमासंविलयं चयातु।

अप्राप्य बोधिं बहुकल्पदुर्लभां नह्यासनाद गात्रामिदंचलिष्यति।।य

यह उनकी भीष्म प्रतिज्ञा थी और अन्त में अपनी आत्म–दमन के द्वारा उन्होंने उस महान् बोधि को प्राप्त किया जिसका प्रकाश आज भी अंधकार में पड़े मानवों के लिए प्रकाश–स्तम्भ का कार्य कर रहा है। इस आत्म–दमन की महत्ता के कारण जनता के सदाचार की वृद्धि हुई और बौद्ध धर्म मेंवे बुराइयां नहीं आने पाई जो अन्य धर्मों में विद्यमान थी। इस प्रकार से हम देखते हैं कि बौद्ध धर्म में बुद्धिवाद, मनुष्यों के समान अधिकार, सदाचार की महत्ता, अहिंसा का पालन तथा आत्मदमन आदि ऐसी अनेक बातें भी जो साधारण मनुष्यों को भी 'अपील' करती थी। परन्तु इनमें सबसे महत्वपूर्ण बात मनुष्यों की समानता थी। जिस स्वतंत्राता समानता तथा भ्रातृता के अधिकार की प्राप्ति के लिए लोगों ने 18वीं शताब्दी में प्रचण्ड विद्रोह किया था उसी समानता तथा स्वतंत्राता का अधिकार गौतम बुद्ध ने आज से 2500 वर्ष पूर्व सभी मानवों को दे दिया था। इससे बढ़कर उदारता क्या हो सकती है? सचमुच बौद्ध धर्म एक जनतंत्रा धर्म है। इसके बहुल प्रचार तथा विस्तृत प्रसार का यही सर्वप्रधान कारण है।

वर्तमान में बौद्ध दर्शन की प्रासांगिकता :

आज संपूर्ण विश्व चतुर्दिक हिंसा एवं साम्प्रदायिक दंगों की विभिषिका में घिर कर विश्व–युद्ध के कगार पर खड़ा हुआ है। अशांति एवं स्वार्थ के चरमोत्कर्ष का ही परिणाम है कि व्यक्ति संत्रास्त, कष्टग्रस्त एवं दुःखी है। संदेह एवं अविश्वास ने संपूर्ण वातावरण को विषम बना डाला है मनुष्य ही मानवता का भक्षक बना हुआ है। धर्म के नाम पर पाखण्ड एवं दिखावा कर्म के नाम पर हिंसा, छल, कपट, धोखा, बेइमानी प्रत्यक्षतः दृष्टिगत होता है। मर्यादाओं का परित्याग कर स्वच्छन्दता एवं उद्दण्डता को अपनाकर असहिष्णु बन गया है। जो संघर्ष की स्थिति को स्वयमेय जन्म देती है, परिणामस्वरूप मनुष्य के मन में स्वार्थ, ईर्ष्या, चोरी, झूठ, हिंसा ने स्थान बना लिया है। जिन संस्कारों एवं मर्यादाओं के पालन से आदर्शों की परिधि एवं मानवता की वृ(होती थी, वही मानवता, वर्तमान में स्वार्थ लोलुपता एवं संस्कारहीनता के अंधकूप में अत्यधिक गहराई तक पतनोन्मुख होती जा रही है। देश, धर्म एवं सम्प्रदाय के नाम पर विभक्त हो रहा है। धर्म का स्वरूप विकृत होकर व्यावहारिक रूप में मात्रा पाखण्ड बनकर अपना अर्थ, स्वरूप एवं व्यापकता खोकर संकीर्ण हो चुका है। असत्य, चोरी एवं लिप्सा की बढ़ती घृणास्पद प्रवृत्ति से संघर्ष हेतु हमें अपनी प्राचीन परंपराओं का ही अनुगमन करना पड़ेगा। आज के भारतीय जीवन दर्शन में मानव के अस्तित्व की लड़ाई को जीतने के लिए समस्त तथ्यों की आवश्यकता है, जो भारतीय दर्शन के मूल में हैं एवं लोक मगल की भावना से ओत–प्रोत है।

सामाजिक परिप्रेक्ष्य में बौद्ध दर्शन की उपादेयता:

वर्तमान के ज्वलंत समस्याओं से जूझती रूग्ण मानवता के लिए बुद्ध के उपदेशों की महत्ती आवश्यकता है जोकि अनिश्चितता के भंवर में पफंसी प्राणी मात्रा की रक्षा कर सके। इनका प्रमुख उद्देश्य था–अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य एवं मद्यनिषेध। वर्तमान परिवेश में सर्वाधिक प्रासंगिक है, ये पंचशील एवं इनमें भी प्रमुख हैं अहिंसा धर्म का पालन। विश्व में अहिंसा से बड़ा कोई धर्म नहीं है। अहिंसा का तात्पर्य है–प्राणी मात्रा के प्रति जिसमें वनस्पति एवं समस्त जीवधारी भी हैं की हिंसा न करना, न दुःख पहुंचाना वं न ही कोई ऐसा कार्य करना जोकि अपने मन, वचन एवं कर्म के प्रतिकूल हो।

इस प्रकार हमारा भावनात्मक लगाव संपूर्ण विश्व के साथ हो जाएगा। अपने अधीन श्रमिक का शोषण न होने दें, उसकी रोजी–रोटी में बाधक न बनें, विश्वासघात न करें, ठगी, लूटपाट, डकैती न करें, रिश्वत न लें, झूठ एवं वचन के माध्यम से स्वार्थ सिद्धि न करें, आवश्यकता से अधिक का संग्रह कर किसी की आवश्यक आवश्यकता पूर्ति में बाधक न बनें।

निन्दनीय कर्मों का परिहार करते हुए असत्य, पिशुन वचन, बहुवचन एवं व्यर्थ के प्रलाप का परित्याग करें। इंद्रियों पर संयम रखते हुए व्यभिचारादि से बचें। बुद्ध की दृष्टि में कोई भी अछूत नहीं था। वे समाज में ऊंच–नीच के भेदभाव के कट्टर विरोधी थे। उनकी मान्यता थी कि कोई व्यक्ति ब्राह्मण कुल में जन्म लेने से ब्राह्मण नहीं होता न ही अब्राह्मण घर में जन्म लेने पर अब्राह्मण ही होताहै। कर्मों से ही कोई ब्राह्मण तो कोई अब्राह्मण होता है। जन्म से नहीं। वे जन्मना ब्राह्मणत्व की अपेक्षा कर्मणा ब्राह्मणत्व को महत्वपूर्ण मानते हैं। यद्यपि बुद्ध के उपदेशों का अक्षरशः पालन आज के परिवेश में संभव नहीं है, क्योंकि गृहस्थ जीवन यापन करते हुए समस्त यम–नियमों का अविकल रूप से पालन संभव नहीं है। तथापि यदि आंशिक अनुकरण भी कर सके तो उन पाप कर्मों एवं साम्प्रदायिक भावना से मुक्त हो सकते हैं जिसने आज मानवता का मस्तक लज्जावनत कर दिया है। साथ ही उन मृतप्राय भावनाओं का जोकि आज के परिप्रेक्ष्य में मृतप्राय हो चुकी हैं जागृत कर

अन्तरात्मा की अन्तः ध्वनि को सुन एवं क्रियान्वित रूप देकर समाज का कल्याण कर सकते हैं। गौतम बुद्ध ने भी दो अतियों का सेवन हेय माना था–भोग–विलास पूर्ण जीवन एवं शरीर को व्यर्थ मे कष्ट देकर भयंकर तप साधना सिद्धि हेतु प्रयास। संयम एवं सदाचारमय जीवन ही बुद्ध के धर्म का सार है, जिनकी आज संपूर्ण मानवता को अत्यधिक आवश्यकता है। सूक्ष्म एवं जटिल दार्शनिक विचारों यथा–जीव, आत्मा, ईश्वर, सृष्टि, रहस्य आदि तत्व क्या हैं? एवं कैसे हैं? इन प्रश्नों एवं विचारों को अपने जीवन दर्शन में स्थान एवं महत्व नहीं दिया क्योंकि तत्कालीन परिवेश में जन–सामान्य के कल्याण हेतु उसकी समस्याओं के निदान हेतु इन दार्शनिक रहस्यों के प्रश्न यदि अनुत्तरित भी रहते हैं तो जन–सामान्य की जीवन प(ति में अंतर नहीं पड़ता, अपितु उसे आवश्यकता थी एक ऐसे नेतृत्व कर्ता की, उपदेष्टा की जो तत्कालीन परिवेश की सामाजिक समस्याग्रस्त मानवता को अपने श्रेष्ठ विचारों की समदर्शिता की जीवनदायिनी प्राण शक्ति उनमें जगाकर उन्हें भी समाज में उच्च स्थान दिला सके जिन्हें समाज अछूत कहकर सदियों से दमित किए हुए था।

तत्कालीन परिवेश में जिनमें सांख्य एवं बौद्ध दर्शन की उत्पत्ति एवं अभ्युदय हुआ था, इनके विचारों की उपादेयता निःसंदेह महत्वपूर्ण थी, परंतु यदि हम गणवेषणात्मक दृष्टि से दोनों ही दर्शनों के विचारों, उपदेशों का अवलोकन करें तो ये वर्तमान संदर्भों में भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने कि तब थे। आज स्वार्थ के घृणित चरमोत्कर्ष का ही परिणाम था–ईराक, अमेरिका युद्ध। परमाणुवाद के इस युग में विश्व युद्ध की संभावनाओं से भी इंकार नहीं किया जा सकता। इन सबके पृष्ठ में है, सहिष्णुता एवं मानवता के प्रति प्रेम एवं कल्याण भावना का पूर्णतः अभाव। सभी राष्ट्रों की विश्व विजेता के गौरव से विभूषित होने की प्रबल आकांक्षा। फ्एको अहं द्वितीयो नास्तिय की इस भावना ने संपूर्ण मानवता को पीड़ा से कहराने पर विवश किया। आज बुद्ध के विचारों एवं उपदेशों को आत्मसात् करने की महत्ती आवश्यकता है। आत्मसंयम्, त्याग, परोपकार, करुणा, प्राणीमात्रा के प्रति दया, अहिंसा, लोक मंगल की भावना, उदारता, मनुष्यों में समानता का भाव, जातिगत विद्वेष से रहित होना, सदाचार पालन, काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, तृष्णा का दमन, ब्रह्मचर्य का पालन आदि उपदेश उतने ही प्रासंगिक आज भी हैं, जितने कि आज से 2500 वर्ष पूर्व थे। भगवान् तथागत का यह धर्म दुःख, जरा एवं व्याधि की पीड़ा से संतप्त मानवता को सुख शांति एवं भातृभाव का संदेश आज भी दे रहा है।

वर्तमान समय में विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच बढ़ता परस्पर वैमनस्य और अपने को श्रेष्ठ साबित करने के लिए आतंकवाद का सहारा लेना और इसे धर्म युद्ध का नाम देकर अपने को महिमा मण्डित करने की एक प्रथा सी चल पड़ी है। इसी आतंकवाद की परिणति रही है मुस्लिम कट्टरपंथी धर्म अनुयायियों द्वाराअमेरिका के वर्ल्ड ट्रेड सेंटर तथा पेण्टागन जैसे व्यापारिक तथा सामरिक महत्व के स्थलों पर अनेक निर्दोष मानव मात्रा की सामूहिक हत्या और इसे धर्म युद्ध का नाम देकर उचित ठहराने का प्रयास किया गया जबकि शायद ही विश्व को कोई ऐसा धर्म होगा जो निर्दोष प्राणियों की हत्या को सही मानता होगा किन्तु इसकी उपेक्षा करते हुए हिंसा का रास्ता कट्टरपंथियों ने अपनाया और समस्त मानव सभ्यता के प्रति एक अत्यन्त कायरतापूर्ण, घृणित एवं कलंकित कार्य किया। वर्तमान में आतंकवाद की समस्या कुठित मानसिकता, धर्म की गलत परिभाषा के कारण उत्पन्न हुई है, वे ये भूल गये कि हम भी मानव हैं और जिनके प्रति हिंसा का कार्य कर रहे हैं वे भी मानव हैं। वे यह भी भूल गये कि इस आतंकवाद का परिणाम क्या होगा? क्योंकि हिंसा का मार्ग कभी भी किसी भी समुदाय को स्थायी शांति नहीं प्रदान कर सकता। महाभारत कथा में एक स्थान पर भीष्म पितामह दुर्योधन से कहते हैं कि शांति का मार्ग सम्पन्नता और प्रगति की ओर ले जाता है जबकि युद्ध का मार्ग पतन और श्मशान घाट तक ले जाता है। स्पष्ट है कि आतंकवाद से न तो आतंकवादियों का भला होने वाला है और न ही जिनके प्रति इनका प्रयोग किया जाएगा उनका ही भला होने वाला है।

यह तो समस्त मानव सभ्यता के लिए एक खतरा है जिसके अंत में शेष कुछ भी नहीं बचेगा। ऐसी परिस्थिति में भगवान् बुद्ध के संदेश मानव सभ्यता के लिए वर्तमान में प्रकाश स्तंभ हैं जिसकी रोशनी का यदि अंश मात्रा भी अनुसरण मानव जाति कर ले तो निश्चिय ही वह वर्तमान में उन्नति और प्रगति के उच्चतम शिखर पर पहुंच सकता है जिसमें सभी सुखी और शांतिमय जीवन जी सकते है। बौद्ध दर्शन ने कैवल्य या निर्वाण को जीवन का परम लक्ष्य स्वीकार किया है, जो अविद्या से दूर होने पर इसी जीवन में प्राप्त किया जा सकता है। यज्ञों में पशु बलि के विरुद्ध बौद्ध दर्शन में यत्रा–तत्रा उल्लेख मिलता है। उसके अनुसार जब तक व्यक्ति का चरित्रा शुद्ध नहीं होगा। काम, क्रोध, लोभ, मोह पर विजय प्राप्ति संभव नहीं है। सभी याज्ञिक अनुष्ठान व्यर्थ हैं। वेद को यद्यति गृहस्थ जीवनयापन करते हुए वर्तमान संदर्भों में निर्वाण एवं कैवल्य प्राप्ति हेतु प्रयास संभव नहीं है। तथापि ज्वलंत सामाजिक समस्याएं आज भी दानवाकार रूप धारण किए संपूर्ण मानतवा के समुख विकराल रूप में खड़ी हैं, जिनसे मुक्ति हेतु बुद्ध के बताये नैतिक कर्त्तव्यों का पालन आवश्यक है, जिससे दुःख निवृत्ति के साथ ही चित्त की परिशुद्धि भी संभव हो सके। वर्तमान के निरंतर गिरते मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करने हेतु पुरातन आदर्शों एवं मान्यताओं को, मर्यादाओं को जीवन में ग्रहण करने की महत्ती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथः

अंगुत्तर निकाय : सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी, संस्करण 1958, सम्पादिक रिचर्ड मोरिस और एण्डमण्ड हार्डी, पालि टेक्स्ट सोसायटी लन्दन, 1885–1900

कथावस्तु : सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा, देवनागरी संस्करण 1961

जातक : सम्पादिक, पफाउसबोल्ल, ट्रबनर एण्ड कं.लि., लंदन, 1877–96

चुल्लवग्ग : सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1956

थेरगाथा : सम्पादक, एच. ओल्डेनवर्ग, पालि

www.ignited.in

सोसायटी, लन्दन 1833, नालंदा देवनागरीए संस्करण, 1959

थेरीगाथा : सम्पादक, आर. पिशेल, पालि सोसायटी, लन्दन 1833, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1959

दीघनिकाय : सम्पादक, टी.डब्ल्यू, रीज रेविड्स और जे.इ. कारपेंटर, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लंदन, 1890–1911, सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा, देवनागरी संस्करण, 1958, हिन्दी अनुवाद, राहुल सांकृत्यायन, महाबोधि, सारनाथ, 1936

दीपवंश : सम्पादक, ओल्डेनबर्ग, लन्दन, 1879

ध्म्मपद : सम्पादक, एस.एस. थेर, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, 1914, अंग्रेजी अनुवाद, एपफ. मेक्समूलर, सेक्रेड कुक्स ऑपफ दी ईस्ट, जिल्द 10, ;भारतीय संस्करणद्ध दिल्ली 1965

ध्म्मपद अट्ठकथा : बुद्ध घोष, सम्पादित, एच.सी. नार्मल और एच. एस. तेलंग, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, 1906–15

मज्झिम निकाय : सम्पादित भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1958, सम्पादक, बी. ट्रैन्कर और आर. यामर्स, पालि टेक्स्ट सोयायटी, लन्दन, 1888–1902, हिन्दी अनुवाद, राहुल सांकृत्यायन, सारनाथ, 1964

महावग्ग : सम्पादिक भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1956

महावंश : सम्पादक, डब्ल्यू, गायगर, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन, 1908, अंग्रेजी अनुवाद डब्ल्यू. गायगर तथा एम.एच. बोस, लन्दन 1912

मिलिन्दयञहो : सम्पादित, वाडेकर, आर.डी., बम्बई, 1940

विनय पिटक : सम्पादित एच. ओल्डेनवर्ग, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन 1879–93, अंग्रेजी अनुवाद विनय टेक्स्ट, टी.डब्ल्यू. रीज डेविड्स और एच. ओल्डेनवर्ग, सेक्रेड कुक्स ऑपफ दी ईस्ट, ;जिल्द 13,17,20द्ध भारतीय संस्करण दिल्ली 1965

समन्त वासादिका : विनयपिटक की टीका, बुद्धघोष, जे. ताकाकुसु और एस. नागी द्वारा सम्पादित, पालि टेक्स्ट, लन्दन, 1924–47

सुत्त निपात : सम्पादक, डी. एण्डरसन और एस. स्मिथ, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन 1913, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1958, अंग्रेजी अनुवाद, बी. पफॉसबॉल, सेक्रेड कुक्स ऑपफ दी ईस्ट, भारतीय संस्करण 1965, इ.एम. हेयर, सेक्रेड बुक्स ऑपफ दी बुद्ध(स्टस, लन्दन 1945

संयुक्त निकाय : सम्पादक, लिमोन न्यिर और श्रीमती रीज डेविड्स, पालि टेक्स्ट सोसायटी, लन्दन 884–1904,

सम्पादित, भिक्षु जगदीश कश्यप, नालंदा देवनागरी संस्करण, 1957, हिन्दी अनुवाद भिक्षु जगदीश कश्यप, ;दो जिल्दों मेंद्ध महाबोधि, सारनाथ, 1954

संस्कृत–ब्राह्मण–ग्रन्थ

अथर्ववेद : सम्पादित, श्री पाठ शर्मा, औंध्नगर, 1938

ट्टग्वेद : सम्पादित, श्री पाद शर्मा, औंध्नगर, 1940

ऐतरेय ब्राह्मण : सम्पादित, मार्टिग हॉग, बम्बई, 1863

छांदोग्य उपनिषद : सम्पादित, वीर राघवाचार्य, तिरुपति, 1952

तैत्तिरीय ब्राह्मण : सम्पादित, शाम शास्त्री, मैसूर, 1921

बृहदारण्यक–उपनिषद् : सम्पादित, वीर राघवाचार्य, तिरूपति, 1954

मनु–स्मृति : सम्पादित, पाठक गणेशदत्त, वाराणसी, 1948

महाभारत : सम्पादित, चित्राशाला प्रेस, पूना, 1929

शतपथ–ब्राह्मण : सम्पादित, वेबर लाइपजिग, 1924

सहायक ग्रन्थ

अल्तेकर अ.स. : एजुकेशन इन ऐन्सियेन्ट इण्डिया, वाराणसी, 1944

इलियट, सर चार्ल्स : हिन्दुइज्म एण्ड बुि(ज्म, लन्दन 1962

उपाध्याय, बलदेव : बौद्ध दर्शन, बनारस, सम्वत् 2003

उपाध्याय, नागेन्द्र नाथ : तान्त्रिाक बौद्ध साध्ना और साहित्य, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संस्करण, सम्वत् 2015

उपाध्याय, भरत सिंह : पालि साहित्य का इतिहास, प्रयाग, सम्वत् 2008, बुद्धिकालीन भारतीय भूगोल, प्रयाग, सम्वत् 2018 ध्यान सम्प्रदाय, नेशनल पब्लिकेशन हाऊस, दिल्ली

उपासक, चन्द्रिका सिंह : डिक्शनरी ऑपफ अर्ली बुि(स्ट मोनोस्टिकटर्क्स, वाराणसी 1975

कर्न, एच. : मैनुअल ऑपफ इण्डियन बुि(ज्म, वाराणसी, 1968

कान्जे, एडवर्ड : ए शार्ट हिस्ट्री ऑपफ बुि(ज्म, बम्बई, 1960,

वही : थर्टी इयर्स ऑपफ बुि(स्ट स्टडीज, सेलेक्टेड एसेज, ब्रूनो केस्सिरेर लिमिटेड, 1967

कान्जे, एडवर्ड : बुद्धि इट्स एसेन्स एण्ड डिवैल्पमैंट आक्सपफोर्ड 1960

कोसम्बी, दामोदर ध्र्मानन्द : दी कल्वर एण्ड सिविलाइजेशन ऑपफ ऐंश्येन्ट इण्डिया, इन हिस्टारिकल आउट लाइन, भारतीय संस्करण, दिल्ली 1975

त्रिावेद, देवसहाय : प्राघग मौर्य भारत, पटना, 1954

त्रिवेदी, कृष्णकुमार : प्राचीन पालि साहित्य ससे ज्ञात संस्कृति का एक अध्ययन, प्रकाशित शोध–प्रबन्ध काशी हिन्दू

विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1970

थामस, ई.जे. : दी हिस्ट्री ऑपफ बुद्धिस्ट था, लन्दन, 1963

वही : दी लाइपफ ऑपफ बुद्ध ऐज लीजेण्ड एण्ड हिस्ट्री, लन्दन, 1949

दत्त नलिनाक्ष : अर्ली मोनोस्टिक बुद्धिज्म, कलकत्ता, 1960

वही : अर्ली हिस्ट्री ऑपफ स्प्रेड ऑपफ बुद्धिज्म एण्ड बुस्टि स्कूल्स, लन्दन, 1925

दत्त नलिनाक्ष– –एवं वाजपेयी के.डी : उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, लखनऊ, 1930

दत्त सुकुमार : अर्ली बुद्धिस्ट मानाशिज्म, लन्दन, 1960

वही : दी बुद्ध एण्ड पफाइव आफ्रटर सेन्चुरीज, लन्दन, 1957

वही : बुद्धिस्ट मान्क्स एण्ड मोनेस्टरीज इन इण्डिया, लन्दन, 1962

नारायण, ऐ.के. ;सं.द्ध : स्टडीज इन दी पालि एण्ड बुद्धिज्म, दिल्ली, 1979

वही : स्टडीज इन दी हिस्ट्री ऑपफ बुद्धिज्म, दिल्ली, 1980

प्रकाश, श्याम : दिव्यावदान में संस्कृति का स्वरूप, आगरा, 1970

पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र : स्टडीज इन दी ओरिजिन्स ऑपफ बुद्धिज्म, इलाहाबाद, 1957

वही : बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, लखनऊ, 1976

प्रिलुस्की, जीन : दी लीजेण्ड ऑपफ इम्परर अशोक इन इण्डियन एण्ड चाइनीज टेक्स्ट्स, कलकत्ता, 1967

पूर्से, डी.ला. बेली : दी बुद्धिस्ट काउन्सिल, कलकत्ता, 1967

नइवाल्नर, ई. : दी अलियिस्ट विनय एण्ड दी विगनिग्स ऑपफ बुद्धिस्ट लिटरेचर,रोम 1956

पिफंक, रिचर्ड : दी स्पेसल आर्गेनाइजेशन इन नॉर्थ ईस्ट इण्डिया इन बुद्धराज टाइम, कलकत्ता, 1920

बापट, पी.वी. ;सं.द्ध : 2500 इयर्स ऑपफ बुद्धिज्म, दिल्ली, 1971

बील, सैम्युल : बुद्धिस्ट रेकार्डस ऑपफ दी वेस्टर्न वर्ल्ड, पुनर्मुदित, सुशील गुप्त कलकत्ता, 1963

बुस्लोन : हिस्ट्री ऑपफ बुद्धिज्म, 2 जिल्द, 1931–32

मसूरा, जे. : ओरिजिन्स एण्ड डाक्ट्रिन्स ऑपफ अर्ली इण्डियन बुद्धिस्ट स्कूल्स एशिया मेजर भाग–2, 1925

मूर्ति, टी.आर.वी. : दी सेन्ट्रल पिफलास्पफी ऑपफ बुद्धिज्म, ए स्टडी ऑपफ दी माध्यमिक सिस्टम, लन्दन, 1960

सकहिल, डब्ल्यू. डब्ल्यू. : दी लाइपफ ऑपफ बुद्ध, लन्दन, 1884

राबिन्सन, रिचर्ड ए.: बुद्धिस्ट रेलिजन : ए हिस्टारिकल इन्ट्रोडक्शन,बेलमान्ट,

www.ignited.in

कैलीपफोर्निया, 1970

वर्मा, विश्वनाथ प्रसाद : अर्ली बुद्धिज्म एण्ड इट्स ओरिजिन्स, नई दिल्ली, 1973

बागले, नरेन्द्र : सोसायटी एट दी टाइम ऑपफ बुद्ध, बम्बई, 1966

वार्डर, ए.के. : इण्डियन बुद्धिज्म, दिल्ली, 1970

शास्त्राी, मित्रा : एन आउट लाइन ऑपफ अर्ली बुद्धिज्म, वाराणसी, 1965

श्रीमती रीज डेविड्स : गौतम दी मैन, 1928

वही : साक्य ऑर बुद्धिस्ट ओरिजिन्स, 1931

वही : ह्वाट वाज दी ओरिजिनल, बुद्धिज्म, 1938

श्री राहुल वालगोपाल : ह्वाट दी बुद्ध टॉट, न्यूयार्क, 1974

सद्धातिस्स : बुद्ध जीवन और दर्शन, दिल्ली, 1991

सांकृत्यायन, राहुल : बुद्धचर्या, काशी, 1952

सिंह, मदनमोहन : बुद्धकालीन समाज और धर्म, पटना, 1972

हिरियन्ना, एम. : आउट लाइन्स ऑपफ इण्डियन पिफलॉसपफी, लन्दन, 1964

www.ignited.in